Shikshan Sanshodhan : Journal of Arts, Humanities and Social Sciences ISSN: 2581-6241 Volume - 4, Issue - 11, Nov - 2021
Monthly, Peer-Reviewed, Refereed, Indexed Journal Impact Factor: 5.146
Received on : 30/10/2021 Accepted on : 11/11/2021 Publication Date: 15/11/2021

वर्तमान परिस्थितयों के संदर्भ में एकात्म मानववाद विश्व के लिए एक आशा की किरण !

सुनील कुमार
शोधार्थी, कैरियर पॉइंट यूनिवर्सिटी, जिला - हमीरपुर, हिमाचल प्रदेश - 176041
Email – sunilsharmadfzo@gmail.com

सारांश : *प्रस्तुत शोध प्रबंध में पंडित दीनदयाल उपाध्याय द्वारा दिया गया दर्शन 'एकात्म मानववाद' वर्तमान परिस्थियों के सम्बन्ध में, सम्पूर्ण विश्व के लिए एक आशा की किरण बन सकता है । इस विषय पर विस्तृत विवेचना की गई है । वर्तमान समय में पश्चिमी 'पूंजीवादी व्यक्तिवाद' एवं 'मार्क्सवादी समाजवाद' दोनों ही दुनिया को दो गुटों में बाँट चुके हैं । विकसित देश अल्प विकसित देशों का धर्म, जाति, पंथ, मत, रंग-भेद और धन आदि सभी तरह के शोषण करने में कोई कमी नहीं छोड़ रहे हैं । आज कोई भी देश स्थिरता से नहीं रह पा रहा है । धर्म के नाम कुछ लोग अपनों को ही मौत बाँट रहे हैं, तो कुछ दुसरे देशों में आतंकवाद, नक्सलवाद, माओवाद फैलाने में जुटे हैं । कोई भी देश दुसरे देश को सुखी नहीं देखना चाहता है । पूंजीवादी अर्थव्यवस्थायें विकास के नाम पर प्राकृतिक संसाधनों का अंधाधुंध उपयोग करके सम्पूर्ण विश्व को विनाश की धकेलने का कार्य कर रही हैं । दुसरी तरफ अल्प विकसित देश, विकासशील देश, साम्यवादी तथा समाजवादी ताकतें भीं विकास के नाम पर मानवता के ईश्वरीय ढांचे को तार-तार करने में कोई कसर नहीं छोड़ रहे हैं । ऐसे में इस धरा के ईश्वरीय ताने-बुने को सुरक्षित रखने के लिए विश्व को आज के संदर्भ में 'एकात्म मानववाद' का दिव्य दर्शन कितना जरूरी है । इस पर गहनता से शोध तथा विवेचना की गई है ।*

मुख्य बिंदु : *पंडित दीनदयाल उपाध्याय, एकात्म मानववाद, पूंजीवादी सम्राज्यवाद, साम्यवाद, राष्ट्रवाद, वर्तमान परिस्थितियाँ, सभ्यताएं, संस्कृति ।*

1. प्रस्तावना:

'पश्चिमी पूंजीवादी व्यक्तिवाद' एवं 'मार्क्सवादी समाजवाद' दोनों ही आज के परिपेक्ष में दुनियां को दो गुटों में बाँट चुके हैं। आज विश्व की अधिकतर मानवजाति निर्धनता रेखा के उस स्तर पर पहुंच चुकी है, जिसमें कम आमदनी होने पर ईन्सान अपनी आर्थिक जरुरतों को पूरा करने में असमर्थ दिखाई दे रहा है, जो विकसित देश हैं वह अल्पविकसित देशों का धर्म, जाति, पंथ, मत, रंग-भेद, धन आदि सभी तरह से शोषण करने में कोई कमी नहीं छोड़ रहे हैं। आज कोई भी देश स्थिरता से नहीं जी पा रहा है। धर्म के नाम पर कुछ लोग अपनों को ही मौत बांट रहे हैं, तो कुछ दूसरे देशों में आतंकवाद, नक्सलवाद, माओवाद फैलाने में जुटे हैं। कोई भी देश दूसरे देश को सुखी नहीं देखना चाहता।

समाज में धीरे-धीरे अराजकता का चलन शुरू हो चुका है। एक ओर पूंजीवादी अर्थव्यवस्थाएं प्राकृतिक संसाधानों का अंधाधुंध उपयोग करके संपूर्ण विश्व को विनाश की ओर ले जाने का कार्य कर रही है, तो दूसरी ओर साम्यवादी तथा समाजवादी ताकतें मानवता के ईश्वरीय ढांचे को तार-तार करने में लगी हुई हैं। ऐसा नहीं है कि विश्वभर में कोई विकास मॉडल नहीं आया हो विभिन्न देशों ने कई तरह से विकास मॉडल अपनाए, लेकिन कोई भी मॉडल आशा अनुरुप परिणाम नहीं दे सका। आज विश्व को एक ऐसे विकास मॉडल की जरुरत है, जो संधारणीय हो, एकीकृत हो तथा विश्वव्यापी हो।

एकात्म मानववाद ऐसा ही एक विशिष्ट दर्शन है, जो अपनी प्रकृति में एकीकृत, संधारणीय तथा विश्वव्यापी है। इस दर्शन का चिंतन करने वाले थे 20वीं सदी के महापुरुष, दार्शनिक, राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के प्रचारक, आम जन मानस के प्रेरणास्त्रोत, पत्रकार, अर्थशास्त्री, समाजशिल्पी, महान राजनितिज्ञ पंडित दीन दयाल उपाध्याय जी।

2. शोध उद्देश्य:

- राष्ट्रीय, अंतर्राष्ट्रीय एंव समाजिक परिवेश में पंडित दीनदयाल उपाध्याय जी द्वारा दिये गये दर्शन एकात्म मानववाद को आम जनमानस तक पहुँचाना।
- वर्तमान परिस्थितियों के संदर्भ में एकात्म मानववाद दर्शन की आवश्यकता, उपयोगिता एंव महत्व।
- एकात्म मानववाद दर्शन की उपयोगिता का मूल्यांकन।

3. शोध प्रविधि :

प्रस्तुत शोध-कार्य में निम्नलिखित अनुसंधान प्रविधियों का प्रयोग किया गया है:-

- ग्रंथालयों में उपलब्ध ग्रंथों, शोध ग्रंथों एंव पत्रिकाओं में प्रकाशित सामग्री का अन्वेषण।
- वेबसाइट, ब्लॉग एंव पत्रिकायें इत्यादि में उपलब्ध सामग्री का अन्वेषण।
- पंडित दीनदयाल उपाध्याय जी की रचनाओं एंव भाषणों की पड़ताल की गई है।

उपर्युक्त शोध कार्य में मौलिकता लाने हेतु वैज्ञानिक, एतिहासिक तथा विवरणात्मक विधि का प्रयोग किया गया है।

4. एतिहासिक पृष्ठभूमि:

जब विश्व में अनेक वैचारिक परंपराएं बहुत प्रखरता से प्रचलित थीं, 16वीं शताब्दी के यूरोपिय पुर्नजागरण के बाद की चार शताब्दियों में विचारों ने एक वैश्विक आयाम ग्रहण कर लिया था। अब दृश्यमान विश्व कोई अबूझ पहेली नहीं रह गया था। विश्वयात्रियों ने धरा का हर छोर माप डाला था। विज्ञानवाद, भौतिकवाद एवं मानववाद ने ईश्वर के गुढ़ रहस्यों को एक चुनौती दे दी थी। रहस्यात्मकता पर विज्ञान ने चोट की। श्रद्धामूलक आस्थाओं को तर्क ने हिला दिया तथा अब भगवत कृपा के स्थान पर विवेक का भरोसा हो चला था। थियोक्रेसी को चुनौती देते हुए सैक्युलरिज्म लोकतंत्रात्मक व्यक्तिवाद व समाजवाद की धाराणाएं प्रबल हो गई थीं। यूरोप का कायापलट हो गया था। भगवतकृपा व भगवतभय से मुक्त मानव ने प्रकृति विजय एवं विश्व विजय के अभियान संयोजित किए। साहसपूर्वक खोज लिए गए नए-नए भूप्रदेशों पर यूरोपिय सम्राज्यों का निर्माण हुआ।

20वीं सदी इन सम्राज्यों को चुनौती की सदी थी। राष्ट्रवाद सम्राज्यवाद पर प्रहारक बन गया था। पश्चिम के सम्राज्यवाद ने पूर्ण रूप से एशिया व अफ्रीकी सभ्यताओं को तहस-नहस करना शुरू कर दिया था। अब इन महाद्वीपों में अपनी क्षेत्रीय परंपराओं के स्थान पर विदेशी भाषा, वेशभूषा, ज्ञान-विज्ञान का ही बोलबाला हो गया था।

भारत भी इन सब बदलावों से अछूता नहीं रहा। यहां सता से लेकर आस्था तक सिर्फ विदेशी ताकतों का ही बोलबाला हो गया था। यहां की भोली-भाली जनता सिर्फ नाममात्र से ही भारतीय रह गई थी। अब उन पर विदेशी विचारों का पूर्ण रूप से कब्जा हो चुका था। पश्चिम के संपर्क से विभिन्न समाजों की चिंतन धारा निर्णायक रूप से प्रभावित हो चुकी थी। परंतु कहते हैं उपर वाले के घर देर है अंधेर नहीं। शायद यही कारण रहा होगा कि एशियाई राष्ट्रवादी मानस पश्चिमि सम्राज्यवाद के साथ साथ पश्चिमि ज्ञान की प्रभुता को भी स्वीकार करना अपने स्वाभिमान पर चोट समझने लगा। अत: उसने पश्चिम के ज्ञान को नकारना शुरू कर दिया।

युग पुरुष पंडित दीन दयाल उपाध्याय भारतीय राष्ट्रवाद की इसी धारा के उपज थे। उपाध्याय ने लगभग दो दशकों के अध्ययन व अनुभव के बाद अपनी विचारधारा को एकात्म मानववाद के नाम से भारतीय जनसंघ के सिद्धांत और निति प्रलेख में उद्घोषित किया। उसकी प्रस्तावना में वे शंकराचार्य व चाणक्य का स्मर्ण करते हुए कहते हैं:-

"आज भारत के इतिहास में क्रांति लाने वाले दो पुरुषों की याद आती है। एक वह कि जब जगद्गुरु शंकराचार्य जी सनातन बौद्धिक धर्म का संदेश लेकर देश में व्याप्त अनाचार समाप्त करने चले थे और दूसरा वह कि जब अर्थशास्त्र धारणा का उत्तरदायित्व लेकर संघ राज्यों में बिखरी राष्ट्रीय शक्ति को संगठित कर सम्राज्य की स्थापना करने चाणक्य चले थे।

आज इस प्रारुप को प्रस्तुत करते समय वैसा ही तीसरा महत्वपूर्ण प्रसंग आया है, जबकि विदेशी धाराणाओं के प्रतिबिंब पर आधारित मानव संबंधि अधूरे व अपुष्ट विचारों के मुकाबले विशुद्ध भारतीय विचारों पर आधारित मानव कल्याण का संपूर्ण विचार एकात्म मानववाद के रूप में सुपुष्ट भारतीय दृष्टिकोण को नए सिरे से सूत्रबद्ध करने का काम हम प्रारंभ कर रहे हैं"

वर्तमान परिस्थितियों में यह दर्शन कितना महत्वपूर्ण है इससे पहले हमें यह समझना बहुत जरुरी है कि वास्तव में एकात्म मानववाद दर्शन है क्या?

5. एकात्म मानववाद:

'एकात्म मानववाद' एक ऐसी धारणा है, जो सर्पिलाकार मंडलाकृति द्वारा स्पष्ट की जा सकती है। जिसके केंद्र में व्यक्ति है। व्यक्ति से जुड़ा हुआ घेरा एक परिवार का है। परिवार से जुड़ा हुआ एक घेरा समाज व जाति का है। फिर राष्ट्र, विश्व और फिर अनंत ब्रम्हांड को अपने में समाहित किए है।

इस अखंड मंडलाकार आकृति में एक घटक में से दूसरे फिर दूसरे से तीसरे का विकास होता है।

सभी एक दूसरे से मिलकर अपना अस्तित्व साधते हुए एक दूसरे के पूरक एवं स्वाभाविक सहयोगी हैं। इसमें कोई एक दूसरे का प्रतिद्वंदी नहीं होता।

पंडित जी के एकात्म मानववाद के अनुसार व्यक्ति व्यक्ति का विरोधी न होकर सहयोगी होना चाहिए, जो हमारी सभ्यता और संस्कृति के भीतर ही संभव है। पूंजीवाद अपने से नीचले तबके के लोगों को उपयोग की वस्तु समझकर व्यवहार करता है, जो भेदभाव को जन्म देती है। उनके अनुसार विविधता में एकता अथवा एकता में विविध रूपों में व्यक्तिकरण ही भारतीय संस्कृति का केंद्रस्थ विचार है। यदि हम इस तथ्य को अपने हृदय में बिठा लें, तो फिर विभिन्न सताओं में संघर्ष नहीं होगा। यदि संघर्ष है तो वह प्रकृति अथवा संस्कृति धोतक नहीं है। विकृति का धोतक है। पंडित जी यह भी मानते थे कि संस्कृति प्रकृति की अवहेलना नहीं करती। बल्कि प्रकृति में जो भाव सृष्टि है उनको बढ़ावा देकर दूसरी प्रकृतियों की बाधा को रोकना ही संस्कृति है।

उनके अनुसार किसी भी राष्ट्र की एक आत्मा होती है। उससे अलग जाकर विकास एक विकृति को जन्म देता है। आगे चलकर भारत में भी यह देखा जा सकता है। यही कुछ आज हो रहा है। नंगापन हमारी संस्कृति नहीं, बड़ों का अनादर करना भी हमारी संस्कृति में नहीं, जमाखोरी, कालाबाजारी हमारी संस्कृति नहीं और इसी को आज हम अपना बैठे हैं, जिसके चलते समाज में कई प्रकार की विकृतियां पैदा हो गई हैं। एक भूचाल सा आ गया है। सरेआम हत्या, मिथ्या, बलात्कार की घटनाएं हो रही हैं। हम व्यक्ति के भीतर परमात्मा को देखते हैं, जिसके अनुसार हमारा व्यवहार उसके प्रति बनता है। परंतु पश्चिम में ऐसा कदापी नहीं है। शरीर एक उपयोग की वस्तु है। उसके सिवाए कुछ नहीं।

पंडित जी ने एकात्म मानववाद का सिद्धांत अपने सुदीर्घ चिंतन, अध्ययन एवं मनन के बाद सन 1964-1965 में विचारधारा के नाते इसका प्रणयन किया। पंडित जी मानते थे कि पश्चिम की यह बहस भी एक मानवीय बहस है। इसे हमें जानना चाहिए तथा इससे कुछ सीखना भी चाहिए। परंतु हमें इन द्वंदमूलक निष्कर्षों का अनुयायी नहीं बनना चाहिए।

अत: मौलिक भारतीय चिंतन के आधार पर विकल्प देने की जिम्मेदारी उन्होंने स्वयं स्वीकर की। भारतीय जनसंघ की पहली पीढ़ी के कार्यकर्ता इस काम में लगे। साल 1959 का पूना (महाराष्ट्र) अभ्यास वर्ग 1964 का ग्वालियर (उत्तर प्रदेश) अभ्यास वर्ग तथा 1964 के संघ शिक्षा वर्गों का इस दृष्टि से विशेष महत्व है। इन वर्गों में परिपक्व हुए विचारों को पंडित जी ने सिद्धांत और नीति प्रलेख में एकात्म मानववाद नाम से प्रस्तुत किया।

साल 1965 में भारतीय जनसंघ के विजयवाड़ा (आंध्र प्रदेश) वार्षिक अधिवेशन में इसे मूल दर्शन के रूप में स्वीकार किया गया तथा साल 1985 में भारतीय जनता पार्टी ने भी इसे अपने मूल दर्शन के रूप में स्वीकार किया।

यह विचार व्यक्ति बनाम समाज नहीं वरन् व्यक्ति और समाज की एकात्मता का विचार है। यह मानव बनाम प्रकृति नहीं वरन् मानव के साथ प्रकृति की एकात्मता का विचार है। भौतिक बनाम अध्यात्मिक नहीं वरन् इसकी एकात्मता का विचार है। भारत में इसे धर्म कहा गया।

'यतो अभ्युदय नि:श्रेयस संसिद्धि स धर्म'

अर्थात

यह व्यष्टि, समिष्ट, सृष्टि व परमेष्ठी की एकात्मता का विचार है।

यह विचार दृश्यमान पृथकताओं में एकात्मता के सूत्र खोजता है। संसार में पृथकता नहीं विविधता है, जो पिंड में है वही ब्रह्मांड में है। आज मानव अपने को व्यक्ति मानकर अपनी सामाजिक संस्थाओं से युद्ध कर रहा है। परिवार, जाति, वंश, पंचायत सबको अपना दुश्मन मान रहा है। समाजवाद के नाम पर तानाशाहियों का सृजन कर रहा है, विकास के नाम पर प्रकृति से युद्ध कर रहा है। पर्यावरण का विनाश कर भयानक विभिषिकाओं को आमंत्रित कर रहा है। अध्यात्म का निषेध कर भौगेंन्द्रियों का गुलाम बन रहा है। सुख की खोज में दु:ख कमा रहा है तथा आनंद की अवधारणा से अपरिचित रह रहा है।

भारतीय परंपरा इन पृथकताओं का निषेध करती है व जड़, चेतन सभी से अपने रिश्ते स्थापित करती है। जहां धरती और नदियां माता का रुप है, तो चंद्रमा मामा का और पर्वत देवता का रूप है। समाज का हर घटक किसी न किसी रूप में एक दूसरे से परस्पर जुड़ा हुआ है। यह दुनिया परायेपन की जगह नहीं, यह वसुधा तो कुटुंब है। आदि विचार मानव को असंम्बद्धता, पृथकता तथा द्वंन्दशीलता के संबंधों से निजात दिलाते हैं।

एकात्मता समग्रता में निहित रहती है। समग्रता के अभाव में खंड दृष्टि से मानव अक्रांत होता है। जैसे ब्रह्मांड की समग्रता है वैसे ही व्यक्ति की भी समग्रता है। व्यक्ति अर्थात केवल शरीर नहीं। उसके पास मन है, बुद्धि है और आत्मा भी है। यदि इन चारों में से एक की भी उपेक्षा हो जाए, तो व्यक्ति का सुख विकलांग हो जाएगा। इन चारों के पृथक-पृथक सुख से व्यक्ति सुखी नहीं होता। उसे तो एकात्म एवं धनी भूत सुख चाहिए, जिसे आनंद कहते हैं।

वैसे ही समाज केवल सरकार नहीं है, उसकी अपनी संस्कृति है। जन एवं देश है। इन चारों के सम्यक संचालन के बिना समष्टि के सुख का संधान नहीं होता।

इस प्रकार सृष्टि के पंच महाभूत पृथ्वी, जल, आकाश, अग्नि व वायु है, जिसके साथ न्यायसंगत व्यवहार होना चाहिए तथा अदृश्य किंतु अनुभूति में आने वाले अध्यात्मिक तत्वों से भी योग्य साक्षात्कार होना चाहिए। तभी मानव सुखी होगा।

व्यष्टि, समष्टि, सृष्टि तथा परमेष्ठी से एकात्म हुआ मानव ही विराट पुरुष है। इसके पुरुषार्थ चर्तुयामी है। धर्म अर्थ काम और मोक्ष ये पुरुषार्थ मानव की परिस्थिति निरपेक्ष आवश्यकताएं हैं। इनकी सम्पूर्ति करना समाज व्यवस्था का काम है।

6. एकात्म मानववाद की वैचारिक पृष्ठ भूमि:

इस दर्शन की पृष्ठभूमि के दो आयाम हैं। एक भारतीय संस्कृति तथा दूसरा पाश्चातय जीवन दर्शन जहां एकात्मता भारतीय तथा मानववाद मुख्यत: पाश्चातय अवधारणा है। पाश्चातय प्रयोगों में लौकिक जीवन का वैशिष्ट्य है।

अत: कहा जा सकता है कि पाश्चातय मानववाद के भारतीयकरण की प्रक्रिया की फल श्रुति है 'एकात्म मानववाद'

साधारणत: अपने विभिन्न लेखों व भाषणों में पंडित जी ने भारतीय संस्कृति का गौरव पूर्ण वर्णन किया है। लेकिन वे भारत की कमजोरियों के प्रति भी सचेत थे। एकांगिता काल वाह्यता तथा निहित स्वार्थों के अपने रोग भारत को अंदर से खोखला कर रहे हैं। अत: सांस्कृतिक श्रेष्ठता के नाम पर यथास्थितिवाद के खिलाफ थे। वे लिखते हैं:

"हमने अपनी प्राचीन संस्कृति का विचार किया है, लेकिन हम कोई पुरातत्व नहीं हैं। हम किसी पुरातत्व संग्रहालय के संरक्षक बनकर नहीं बैठना चाहते। हमारा ध्येय संस्कृति का संरक्षण नहीं, अपितु उसे गति देकर सजीव व सक्षम बनाना है। हमें अनेक रुढियां समाप्त करनी होंगी। बहुत से सुधार करने होंगे। .....आज यदि समाज में छुआछूत और भेदभाव घर कर गये हैं, जिनके कारण लोग मानव को मानव समझकर नहीं चलते और जो राष्ट्र की एकता के लिए घातक सिद्ध हो रहे हैं। हम उनको समाप्त करेंगे"

मुंबई के अपने ऐतिहासिक भाषण में जब पंडित जी ने एकात्म मानववाद की व्याख्या प्रस्तुत की, तब बहुत भावपूर्ण शब्दों में उन्होंने अपने व्याख्यान का समापन किया.....

विश्व का ज्ञान और आज तक की अपनी संपूर्ण परंपरा के आधार पर हम ऐसे भारत का निर्माण करेंगे, जो हमारे पूर्वजों के भारत से भी अधिक गौरवशाली होगा, जिसमें जम्मा मानव अपने व्यक्ति का विकास करता हुआ संपूर्ण मानवता ही नहीं, अपितु सृष्टि के साथ एकात्मता का साक्षात्कार कर नर से नारायण बनने में समर्थ हो सकेगा।

यह हमारी संस्कृति का शाश्वत दैवी और प्रवाहमान रूप है। चौराहे पर खड़े विश्व-मानव के लिए यही हमारा दिग्दर्शन है। भगवान हमें शक्ति दें कि हम इस कार्य में सफल हों, यही प्रार्थना है।

उस भाषण के अगले कथन थे:
"....हमारी संपूर्ण व्यवस्था का केंद्र 'मानव' होना चाहिए। जो यत् पिण्डे तत् ब्रह्माण्डे के न्याय के अनुसार समष्टि का जीवनमान प्रतिनिधि एवं उसका उपकरण है। भौतिक उपकरण मानव के सुख के साधन हैं, साध्य नहीं।

जिस व्यवस्था में विभिन्न रूचि लोक का विचार केवल एक औसत मानव अथवा शरीर, मन, बुद्धि व आत्मायुक्त अनेक ऐषणाओं से प्रेरित पुरुषार्थ चतुष्टयशील, पूर्ण मानव के स्थान पर एकांगी मानव का ही विचार किया जाए, वह धुरी हमारा आधार एकात्म मानव है, जो एकात्म समष्टियों का एक साथ प्रतिनिधित्व करने की क्षमता रखता है। एकात्म मानववाद के आधार पर हमें जीवन की सभी व्यवस्थाओं का विकास करना होगा"

7. वर्तमान समय में एकात्म मानववाद की उपयोगिता:

आज विश्व कई धड़ों में बंटा हुआ है। एक तरफ पूंजीवादी अर्थव्यवस्थाओं का बोलबाला है, जो समाज के निम्न तबके को उपयोग की वस्तु मात्र समझती है। उसे निम्न वर्ग को पांव तले कुचलने में कुछ भी गलत नहीं दिखता। पूंजीवाद एक ऐसा दर्शन है, जिसमें उत्पादन के साधन निजी स्वामित्व में होते हैं तथा वस्तुओं और सेवाओं का उत्पादन अधिकतम लाभ कमाने के उद्देश्य से होता है। इससे आय व संपत्ति की विषमताएं बड़ जाती हैं। क्षेत्रीय असमानताएं अपनी चरम सीमा पर पहुंच जाती हैं। आर्थिक अस्थिरता समाज में पनपने लगती है। मुख्य संसाधनों पर एकाधिकार होने लगता है। इससे मानव के नैतिक मूल्यों में भारी गिरावट आने लगती है। दूसरी ओर विकसति देश अल्प विकसति देशों का शोषण करने में कोई कमी नहीं रखते। इसका असर उन दोनों देशों के लोगों के रहन-सहन तथा नैतिक मूल्यों पर पड़ता है।

दूसरी तरफ सम्यवाद का दर्शन है। इस दर्शन की सबसे बड़ी समस्या यह है कि आम जनमानस पर कड़े से कड़े कानून थोप दिए जाते हैं। इससे आम व्यक्ति की आजादी ही कटघड़े में रख दी जाती है। धीरे-धीरे समाज में असंतोष फैलने लगता है और सरकारें उसे कूचलने के लिए हर तरह के हथकंडे अपनाना शुरू कर देती है। परिणामस्वरुप देश में नैतिक मूल्य ही खत्म होने लगते हैं। समाज कई गुटों में बंटने लगता है। इसके परिणाम यह रहते हैं कि देश कई टुकड़ों में फिर से विभाजित होने लगता है। सोबियत संघ रूस इसका जीता जागता उदाहरण है। इसी तरह से विश्व में कई तरह के मॉडल प्रयोग में लाए जा रहे हैं। परंतु कोई भी दर्शन आज के संदर्भ में उपयुक्त नजर नहीं आता है। विश्व को आज ऐसे मॉडल की आवश्यकता है, जो उसकी आशानुरुप परिणाम दे, जो एकीकृत और संधारणीय हो। अत: एकात्म मानववाद ही एक ऐसा दर्शन है, जो आज के परिपेक्ष में दुनिया को नई राह दिखा सकता है।

आज जब पूरा विश्व जलवायु परिवर्तन एवं हरित गृह प्रभाव से उपजी समस्याओं तथा अनवीकरणीय संसाधनों की सीमितता का सामना कर रहा है। इस स्थिति में एकात्म मानववाद प्रेरित संधारणीय विकास की प्रसंगिकता बढ रही है।

ऐसे समय में 'एकात्म मानववाद' का उद्देश्य व्यक्ति एवं समाज की आवश्यकता को संतुलित करते हुए प्रत्येक मानव को गरिमापूर्ण जीवन सुनिश्चित करना है। यह प्राकृतिक संसाधनों के संधारणीय उपयोग का समर्थन करता है ताकि उन संसाधनों की पुन: पूर्ति की जा सके।

'एकात्म मानववाद' न केवल राजनीतिक बल्कि आर्थिक एवं सामाजिक लोकतंत्र एवं स्वतंत्रता को भी बढ़ाता है। यह दर्शन विविधता को प्रोत्साहन देता है।

'एकात्म मानववाद' का उद्देश्य प्रत्येक मानव को गरिमापूर्ण जीवन प्रदान करना है एवं अंतोदय अर्थात समाज में अंतिम पंक्ति में खड़े व्यक्ति के जीवन में सुधार लाना है। यह दर्शन मानव की बुनियादी आवश्यकताओं के साथ साथ कृषि एवं पशुपालन, उद्योग, नियोजन, विकेंद्रीयकरण, मशीनीकरण, उत्पादन, बेरोजगारी एवं मंहगाई जैसे आर्थिक मुद्दों पर विकेंद्रीयकरण एवं स्वदेशी के रूप में समाधान प्रस्तुत करता है।

एकात्म मानववाद भारत की तथा विश्व की राजनीति में अवसरवादी एवं सिद्धांतहीनता पर कटाक्ष करने के साथ साथ राजनीतिज्ञों के सिद्धांतों एवं आदर्शों तथा राजनीतिक दलों के आचार-विचार पर प्रकाश डालता है। क्योंकि बिना राजनीतिक सुधार के समाज में व्यवस्था और एकता स्थापित नहीं की जा सकती।

8. निष्कर्ष:

अंत में मैं यही कहूंगा कि एकात्म मानववाद का दर्शन इस धरा को बचाने के लिए सबसे उपयुक्त और स्थाई समाधान है। क्योंकि इस दर्शन के मूल में ऊं सर्वे भवंतु सुखिन:।

"ऊं सर्वे भवंतु सुखिन;
सर्वे संतु निरामया;
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु।।
मां कश्चित दु:ख भाग्भवेत्।।
ऊं शान्ति: शान्ति: शान्ति:"।।

अर्थात सभी सुखी हों सभी रोगमुक्त रहें, सभी का जीवन मंगलमय बनें और कोई भी दु:ख का भागी ना बने। हे भगवान हमें ऐसा वर दो।

इस तरह जीवन उपयोगी तथा परमात्मा से लगन लगाने वाले विचारों का समावेश है।

यह सिद्धांत सम्पूर्ण वसुधा को एक परिवार की ही भांति मानता है। वसुधैव कुटुम्बकम् सनातन धर्म का मूल संस्कार तथा विचारधारा है, जो महा उपनिषद सहित कई ग्रंथों में लिपिबद्ध है। इसका अर्थ है धरती ही परिवार है। यह वाक्य भारतीय संसद के प्रवेश कक्ष में भी अंकित है।

"अयं निज:परोवेतिगणना लघुचेतसाम्।
उदारचरितानां तु वसुधैव कुटुम्बकम्"।।

मुझे पूर्ण विश्वास है सम्पूर्ण विश्व को इस दर्शन को अपनाने की आवश्यकता है। इससे ही समस्त मानव जाति का कल्याण संभव है। वंदे मातरम् अर्थात इस वीर भोग्या वसुंधरा की वंदना करता हूं।

संदर्भ ग्रंथ सूची:

1. दीनदयाल उपाध्याय (प्रथम संस्करण) दीनदयाल उपाध्याय की वाणी, जागृति प्रकाशन, नॉएडा
2. दीनदयाल उपाध्याय (1958) भारतीय अर्थनीति, विकास की एक दिशा, राष्ट्र धर्म प्रकाशन लिमिटेड, लखनऊ
3. दीनदयाल उपाध्याय (नौवां संस्करण, 2008) एकात्म मानववाद, जागृति प्रकाशन, नॉएडा
4. प्रो. मधु दान्द्वते (प्रथम संस्करण, 1978) गाँधी, लोहिया एंव दीनदयाल, दीनदयाल रिसर्च इंस्टिट्यूट, नई दिल्ली
5. दीनदयाल उपाध्याय (प्रथम संस्करण 1968) इंटीग्रल ह्युम्निज्म, जागृति प्रकाशन, नॉएडा
6. दीनदयाल उपाध्याय (प्रथम जैको संस्करण, 1968) पोलिटिकल डायरी (हिंदी), जैको पब्लिसिंग हाउस, मुंबई
7. दीनदयाल उपाध्याय (मई, 2007) राष्ट्र चिन्तन, लोकहित प्रकाशन, लखनऊ
8. डॉ सरवण सिंह बघेल (श्रवण) (30 जुलाई 2021) पंडित दीनदयाल उपाध्याय जीवन दर्शन एंव एकात्म मानववाद दर्शन का रेखांकन, बीएफसी पब्लिकेशन
9. कृष्णानंद सागर (2001), दीनदयाल उपाध्याय की वाणी, जागृति प्रकाशन, नॉएडा
10. संजय द्विवेदी (2015), भारतीयता के संचारक पंडित दीनदयाल उपाध्याय, विजडम पब्लिकेशन
11. नरेंद्र शिवाजी पटेल (2021), पंडित दीनदयाल उपाध्याय: व्यक्तित्व, कृतित्व व नेतृत्व, बीएफसी पब्लिकेशन
12. भालचंद्र कृष्णाजी केलकर (2016) पंडित दीनदयाल उपाध्याय विचार दर्शन, सरुची प्रकाशन, दिल्ली

आलेख/पत्रिका सूची :-

1. दीनदयाल उपाध्याय (24 अगस्त 1953) अखंड भारत: ध्येय और साधन, पांचजन्य
2. दीनदयाल उपाध्याय (श्रवण शुक्ल, वि.सं. 2005, जुलाई-अगस्त 1948) यात्रा से पूर्व, पांचजन्य पृष्ठ 9.
3. दीनदयाल उपाध्याय (05 जनवरी 1959) हमारी अर्थनीति का मूल आधार, पांचजन्य
4. दीनदयाल उपाध्याय (22 जून 1959) कांग्रेस के 'समाजवादी नारे' से ही कम्युनिस्ट के पैर जमे, पांचजन्य
5. दीनदयाल उपाध्याय (22 जून 1959) केरल और जनसंघ, पांचजन्य
6. दीनदयाल उपाध्याय (02 जनवरी 1959) समाजवाद, लोकतंत्र अथवा मानववाद, पांचजन्य
7. दीनदयाल उपाध्याय (कार्तिक पूर्णिमा, वि. सं. 2005, अंक-6): चिति-2, राष्ट्र धर्म
8. दीनदयाल उपाध्याय (कार्तिक शुक्ल वि.सं. 2005) राजनितिक आय-व्यय, पांचजन्य
9. दीनदयाल उपाध्याय (शरद पूर्णिमा वि.सं. 2006 अंक-1) राष्ट्र जीवन की समस्याएँ, राष्ट्र धर्म
10. दीनदयाल उपाध्याय (भद्रपद कृष्ण-09 वि.सं. 2006) जीवन का ध्येय, पांचजन्य
11. दीनदयाल उपाध्याय (विजय दशमी विशेषांक वि.सं. 2006) मानव की स्थिति और प्रगति, पांचजन्य
12. दीनदयाल उपाध्याय, (21 जनवरी 1962) (चुनाव विशेषांक, पृष्ठ 41 'मताधिकार कागज का टुकड़ा नहीं, लोकाज्ञा है', पांचजन्य
13. एकात्म भारतीय अर्थ चिन्तन, सितम्बर-2016, पृष्ठ संख्या-3, मातृवंदना